अंतरराष्ट्रीय मंचों पर भारत की जलवायु कूटनीति और वैश्विक दक्षिण संवाद

डॉ. रजनी कुमारी

पंजीयन संख्या : 7918 / 2019
स्नातकोत्तर राजनीति विज्ञान विभाग
ति. मां. भा. वि. वि. भागलपुर

सारांश

21वीं सदी की सबसे जटिल चुनौतियों में जलवायु परिवर्तन एक ऐसी समस्या बनकर उभरा है, जिसका समाधान बिना अंतरराष्ट्रीय सहयोग के असंभव है। इस परिप्रेक्ष्य में भारत की भूमिका एक सेतु की तरह है, जो एक ओर विकसित देशों की तकनीकी क्षमता और संसाधनों से जुड़ता है, तो दूसरी ओर वैश्विक दक्षिण—अर्थात विकासशील और अल्पविकसित देशों—की चिंताओं और आवश्यकताओं का प्रतिनिधित्व करता है। यह शोध भारत की जलवायु कूटनीति को अंतरराष्ट्रीय मंचों जैसे **COP (Conference of Parties)**, **G20**, और **International Solar Alliance (ISA)** में उसके विमर्श-निर्माण, नेतृत्व और रणनीतिक साझेदारी के आधार पर विश्लेषित करता है। भारत ने "कॉमन बट डिफरेंशिएटेड रिस्पॉन्सिबिलिटी" (CBDR) जैसे सिद्धांतों का समर्थन करते हुए यह स्थापित किया है कि ऐतिहासिक रूप से प्रदूषण के लिए जिम्मेदार विकसित देश ही अधिक उत्तरदायी हैं। साथ ही, भारत ने *International Solar Alliance* की स्थापना और *LiFE (Lifestyle for Environment)* जैसे वैश्विक अभियान चलाकर यह दर्शाया है कि वह केवल शिकायतकर्ता नहीं, समाधानकर्ता की भूमिका में है।

इस शोध का उद्देश्य यह समझना है कि भारत कैसे वैश्विक जलवायु विमर्श को प्रभावित कर रहा है और किस प्रकार वह वैश्विक दक्षिण के लिए नीति-निर्माण, जलवायु न्याय और वित्तीय सहकारिता के मोर्चे पर नेतृत्वकारी भूमिका निभा रहा है। यह अध्ययन यह भी स्पष्ट करता है कि भारत की जलवायु कूटनीति मात्र पर्यावरणीय मुद्दा नहीं, बल्कि **कूटनीतिक, आर्थिक और रणनीतिक** उपकरण भी बन चुकी है, जो वैश्विक सत्ता-संतुलन को नए सिरे से परिभाषित करने में सक्षम है।

मूल शब्द (Keywords) : जलवायु कूटनीति (Climate Diplomacy), वैश्विक दक्षिण (Global South), जलवायु न्याय (Climate Justice), सीबीडीआर (CBDR – Common But Differentiated Responsibilities), इंटरनेशनल सोलर अलायंस (International Solar Alliance – ISA),, जलवायु वित्त (Climate Finance), हरित ऊर्जा सहयोग (Green Energy Cooperation)

साहित्य समीक्षा

भारत की जलवायु कूटनीति पर विभिन्न विद्वानों और संस्थानों ने गंभीर शोध प्रस्तुत किया है, जो यह संकेत देता है कि भारत केवल एक विकासशील राष्ट्र नहीं, बल्कि वैश्विक जलवायु विमर्श में एक सक्रिय और जिम्मेदार भागीदार बनकर उभरा है। *Navroz Dubash* और *Lavanya Rajamani* जैसे प्रमुख पर्यावरण-विद्वानों ने भारत के जलवायु रुख को 'न्याय आधारित बहुपक्षीयता' (Equity-Based

Multilateralism) के रूप में देखा है, जहाँ विकासशील देशों के लिए हरित ऊर्जा, वित्तीय सहायता और तकनीकी हस्तांतरण की ज़रूरतें रेखांकित की जाती हैं। नीति आयोग, TERI (The Energy and Resources Institute) और CEEW जैसी संस्थाएँ भारत की जलवायु कूटनीति को केवल COP सम्मेलनों में भाषण तक सीमित न मानकर, उसे ISA, LiFE मिशन और G20 जैसे मंचों पर नीति-निर्माण की दिशा में देखती हैं। साथ ही, भारत के नेतृत्व में उभरते *Global South* के देशों को एक साझा मंच देने की कोशिशों को भी महत्वपूर्ण माना गया है। हाल के वर्षों में लिखे गए अंतरराष्ट्रीय शोध-निबंधों और रिपोर्टों (जैसे UNEP Emissions Gap Report, 2023) में भी भारत की जलवायु प्रतिबद्धताओं को व्यावहारिक, संतुलित और नेतृत्वकारी बताया गया है। साहित्य से यह स्पष्ट होता है कि भारत न केवल जलवायु संकट को गंभीरता से ले रहा है, बल्कि वह एक *"नीतिगत नवाचारकर्ता"* (policy innovator) के रूप में वैश्विक दक्षिण की आकांक्षाओं को अंतरराष्ट्रीय मंचों तक पहुँचाने की दिशा में गंभीर प्रयासरत है।

शोध उद्देश्य एवं परिकल्पना :

इस शोध का प्रमुख उद्देश्य यह विश्लेषण करना है कि भारत किस प्रकार अंतरराष्ट्रीय मंचों—जैसे *COP (Conference of Parties)*, *G20*, और *International Solar Alliance (ISA)*—पर जलवायु संबंधी विमर्श को दिशा दे रहा है तथा कैसे वह वैश्विक दक्षिण की आकांक्षाओं, जरूरतों और न्यायपूर्ण विकास के सवालों को प्रभावी ढंग से अंतरराष्ट्रीय एजेंडे में शामिल कर रहा है। शोध आलेख यह भी लक्ष्य करता है कि भारत की जलवायु कूटनीति किस हद तक *"जलवायु न्याय"*, *"सीबीडीआर"* और *"समान उत्तरदायित्व"* जैसे सिद्धांतों को आगे बढ़ाने में सफल रही है। साथ ही, यह अध्ययन वैश्विक दक्षिण के अन्य देशों (जैसे ब्राज़ील, दक्षिण अफ्रीका) के साथ भारत की रणनीतिक साझेदारियों और विकासशील देशों के लिए वित्तीय एवं तकनीकी सहायता की पैरवी में उसकी भूमिका की समीक्षा भी करता है। अंततः, शोध यह समझने का प्रयास करता है कि क्या भारत, जलवायु परिवर्तन जैसे वैश्विक संकट में, केवल एक भागीदार है या वह *"विकासशील विश्व का नेतृत्वकर्ता"* बनकर उभर रहा है।

डेटाबेस एवं कार्यप्रणाली

इस शोध में गुणात्मक (Qualitative) विश्लेषण पद्धति का उपयोग किया गया है, जिसमें भारत की जलवायु कूटनीति से संबंधित दस्तावेज़ों, सरकारी नीतियों, अंतरराष्ट्रीय समझौतों तथा वैश्विक मंचों (जैसे COP, G20, ISA) पर भारत के वक्तव्यों और प्रस्तावों का विश्लेषण किया गया है। शोध हेतु डेटा स्रोतों में नीति आयोग, पर्यावरण मंत्रालय, UNFCCC, IPCC रिपोर्ट, और अंतरराष्ट्रीय पत्र–पत्रिकाएँ जैसे *Nature Climate Change*, *Foreign Affairs* शामिल हैं। तुलनात्मक विश्लेषण के लिए वैश्विक दक्षिण के अन्य देशों (ब्राज़ील, दक्षिण अफ्रीका) की जलवायु नीतियों को भी शामिल किया गया है, जिससे भारत की भूमिका का वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन संभव हो सके।

प्रस्तावना

21वीं सदी में जलवायु परिवर्तन मानवता के समक्ष एक ऐसा संकट बनकर उभरा है, जिसने भू-राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक संतुलन को चुनौती दी है। इस संकट से निपटने के लिए अंतरराष्ट्रीय सहयोग, नीति निर्माण और नेतृत्व अत्यंत आवश्यक हो गया है। ऐसे समय में भारत ने केवल एक विकासशील देश के रूप में ही नहीं, बल्कि *वैश्विक दक्षिण की सामूहिक चेतना* के प्रतिनिधि के रूप में भी

अपनी भूमिका को नये स्तर पर स्थापित किया है। भारत की जलवायु कूटनीति "जलवायु न्याय" और "समान लेकिन विभेदित उत्तरदायित्व" जैसे सिद्धांतों पर आधारित है, जो विकासशील देशों की ऐतिहासिक उपेक्षा और सीमित संसाधनों की सच्चाई को उजागर करते हैं। *COP सम्मेलनों, G20* और *International Solar Alliance* जैसे मंचों पर भारत ने जिस प्रकार वैश्विक विमर्श को प्रभावित किया है, उसने यह प्रमाणित किया है कि वह केवल प्रतिरोध नहीं, बल्कि समाधान देने वाली शक्ति भी है। भारत द्वारा *LiFE (Lifestyle for Environment)* जैसे अभियानों के माध्यम से जलवायु कार्रवाई को जनांदोलन का स्वरूप देना, और *ISA* के माध्यम से सौर ऊर्जा में वैश्विक सहयोग बढ़ाना, इस बात के उदाहरण हैं कि भारत की कूटनीति विचार, व्यवहार और नेतृत्व—तीनों स्तरों पर सक्रिय है।

यह प्रस्तावना शोध के उसी विमर्श को आगे बढ़ाती है—कि किस प्रकार भारत न केवल अपनी रणनीतिक स्थिति को सुदृढ़ कर रहा है, बल्कि वैश्विक दक्षिण को भी एक सशक्त आवाज़ दे रहा है।

भारत की जलवायु कूटनीति में 'वैश्विक दक्षिण' की अवधारणा :

जब जलवायु संकट की चर्चा होती है, तो अक्सर तकनीकी समाधान, ग्रीन एनर्जी और अंतरराष्ट्रीय संधियों की बात की जाती है। लेकिन इस संकट के पीछे छिपा है एक *"जलवायु अन्याय"* — जो उस वैश्विक असमानता को उजागर करता है जिसमें कुछ देशों ने शताब्दियों तक औद्योगिक विकास की दौड़ में पर्यावरण का दोहन किया और अब विकासशील देशों से समान जिम्मेदारी निभाने की अपेक्षा कर रहे हैं।[1] भारत ने इस असंतुलन को चुनौती देने की कोशिश की है — *वैश्विक दक्षिण* की आवाज़ बनकर। भारत की जलवायु कूटनीति का आधार इतिहास में गहराई से जुड़ा है। 1972 के स्टॉकहोम सम्मेलन में भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी का प्रसिद्ध वक्तव्य—*"गरीबी ही सबसे बड़ा प्रदूषण है"*—ने पहली बार विकासशील देशों की जलवायु चिंताओं को वैश्विक विमर्श में स्थापित किया। यह वह क्षण था जब भारत ने स्पष्ट किया कि पर्यावरण संरक्षण और आर्थिक विकास दो विरोधी ध्रुव नहीं, बल्कि संतुलन की आवश्यकता हैं। गुटनिरपेक्ष आंदोलन की विचारधारा के साथ भारत ने 1980–90 के दशक में **जलवायु न्याय** और **साझी लेकिन पृथक ज़िम्मेदारियाँ (CBDR)** जैसे सिद्धांतों को आगे बढ़ाया। *UNFCCC (1992)* और बाद के *क्योटो प्रोटोकॉल (1997)* में भारत ने यह सफलतापूर्वक स्थापित किया कि ऐतिहासिक प्रदूषण के लिए जिम्मेदार देशों को अधिक जिम्मेदारी निभानी चाहिए। पेरिस समझौता (2015) के समय भारत की स्थिति परिपक्व हो चुकी थी। अब वह केवल मांग करने वाला देश नहीं था, बल्कि *समाधान प्रस्तुत करने वाला साझेदार* बन चुका था। *International Solar Alliance (ISA)* का निर्माण, *LiFE (Lifestyle for Environment)* अभियान की अवधारणा, और G20 की अध्यक्षता में भारत ने जलवायु के क्षेत्र में *वैश्विक दक्षिण की सामूहिक चेतना को नेतृत्व* प्रदान किया।[2]

भारत की यह नीति न तो टकराव पर आधारित है और न ही पश्चिम के दबाव में झुकने वाली। यह एक *संतुलित और सशक्त कूटनीति* है, जो यह मानती है कि विकासशील देशों को स्वच्छ ऊर्जा की ओर बढ़ने के लिए तकनीकी, वित्तीय और संस्थागत सहायता दी जानी चाहिए। भारत का यह दृष्टिकोण वैश्विक दक्षिण के लिए न केवल प्रेरणा है, बल्कि यह बताता है कि जलवायु विमर्श केवल विकसित देशों की बौद्धिक बहस नहीं, बल्कि वैश्विक न्याय की एक गूंजती हुई पुकार भी है। आज जब दुनिया जलवायु संकट की गहराइयों में उतर रही है, भारत की ऐतिहासिक भूमिका हमें याद दिलाती है कि समाधान उन्हीं से आएंगे जो *पीड़ा को समझते हैं, न कि केवल संख्याओं को गिनते हैं।*

COP सम्मेलनों में भारत की भूमिका और वैश्विक दक्षिण के लिए नीति-नेतृत्व

जलवायु परिवर्तन अब केवल वैज्ञानिक या पर्यावरणीय चुनौती नहीं रह गया है, यह 21वीं सदी की सबसे गंभीर राजनैतिक, आर्थिक और नैतिक बहस बन चुका है। इस बहस के केंद्र में अब भारत जैसे देश आ खड़े हुए हैं, जो न केवल जलवायु संकट के सबसे अधिक प्रभावितों में शामिल हैं, बल्कि **सामूहिक समाधान** की दिशा में वैश्विक नेतृत्व की भी अपेक्षा से देखे जा रहे हैं। विशेष रूप से *COP सम्मेलनों — COP21 (पेरिस)*, *COP26 (ग्लासगो)* और *COP28 (दुबई)* में भारत की भागीदारी ने यह सिद्ध कर दिया है कि वह "जलवायु कूटनीति" का एक निर्णायक स्वर बन चुका है। पेरिस समझौते (2015) में भारत ने "कॉमन बट डिफरेंशिएटेड रिस्पॉन्सिबिलिटी **(CBDR)**" की पुरजोर वकालत करते हुए यह स्पष्ट किया कि विकासशील देशों को समान जलवायु जिम्मेदारी नहीं दी जा सकती।[3] इस समझौते में भारत का योगदान सिर्फ रक्षात्मक नहीं, बल्कि रचनात्मक भी रहा। *International Solar Alliance (ISA)* की घोषणा, और विकासशील देशों के लिए *सौर ऊर्जा में सहयोग* का प्रस्ताव, भारत की नीतिगत कल्पनाशीलता का प्रमाण बने। COP26 में जब विकसित राष्ट्र 'नेट ज़ीरो 2050' की समय रेखा पर जोर दे रहे थे, भारत ने व्यावहारिकता का परिचय देते हुए 2070 की लक्ष्यरेखा तय की, और साथ ही *LiFE मिशन* का ऐलान कर जलवायु विमर्श को सामाजिक जीवनशैली और जनचेतना से जोड़ने की पहल की। भारत का यह कदम एक नए प्रकार की नॉर्मेटिव पावर के उदय का प्रतीक था — जहाँ देश केवल सैन्य या आर्थिक शक्ति से नहीं, बल्कि मूल्य आधारित नेतृत्व से अपनी पहचान बना रहा है। COP28 (दुबई) में भारत की भूमिका और अधिक सक्रिय दिखी। *1 Sun 1 World 1 Grid* (OSOWOG) के माध्यम से वैश्विक ऊर्जा सहयोग का मॉडल पेश किया गया। वहीं, जलवायु वित्त, तकनीकी सहयोग, और अनुकूलन फंड (Adaptation Fund) जैसे मुद्दों पर भारत ने वैश्विक दक्षिण के देशों की तरफ से सशक्त और तार्किक पैरवी की। भारत का यह रुख स्पष्ट करता है कि वह केवल अपने लिए नहीं, बल्कि उन असंख्य आवाज़ों के लिए बोल रहा है जो अक्सर अंतरराष्ट्रीय मंचों पर हाशिए पर डाल दी जाती हैं।

जलवायु परिवर्तन के विमर्श में भारत की यह भूमिका उस पुराने औपनिवेशिक ढाँचे को चुनौती देती है, जहाँ नीति निर्माण का विशेषाधिकार केवल कुछ विशेष देशों को था। अब यह विशेषाधिकार बदल रहा है — और भारत जैसे देश इसकी *आवश्यकता नहीं, बल्कि अनिवार्यता* बनते जा रहे हैं। भारत की उपस्थिति आज यह कहती है कि *समस्या की जड़ में इतिहास है, लेकिन समाधान की उम्मीद वैश्विक दक्षिण के नेतृत्व में है।*[4]

अंतरराष्ट्रीय सौर गठबंधन (ISA) और भारत की संस्थागत नेतृत्व क्षमता

जब जलवायु परिवर्तन के विरुद्ध वैश्विक लड़ाई की बात होती है, तो आम तौर पर पश्चिमी देशों के वादों और विकासशील देशों की मांगों का टकराव दिखाई देता है। लेकिन इसी विमर्श के बीच एक ऐसी पहल सामने आई, जिसने इन दोनों ध्रुवों के बीच पुल बनने का कार्य किया — *अंतरराष्ट्रीय सौर गठबंधन (ISA)*। और इस गठबंधन की नींव भारत ने रखी, न केवल एक संस्थापक राष्ट्र के रूप में, बल्कि **संस्थागत नेतृत्वकर्ता** के रूप में भी।[5] 2015 के पेरिस जलवायु सम्मेलन के दौरान भारत और फ्रांस द्वारा मिलकर ISA की घोषणा की गई। इसका उद्देश्य था — सौर ऊर्जा संसाधनों से भरपूर उन देशों को एकजुट करना जो पृथ्वी के उष्ण कटिबंधीय क्षेत्र में स्थित हैं। वर्तमान में ISA में 110 से अधिक देश सदस्य हैं, जिनमें से अधिकांश अफ्रीकी, लातिन अमेरिकी, एशियाई और छोटे द्वीपीय विकासशील राष्ट्र हैं। यह अपने आप में भारत के नेतृत्व में **दक्षिण-दक्षिण सहयोग** की सबसे प्रभावशाली मिसाल है। भारत ने ISA को केवल

International Journal of Scientific Research in Engineering and Management (IJSREM)
Volume: 09 Issue: 07 | July - 2025 SJIF Rating: 8.586 ISSN: 2582-3930

एक संगठन नहीं, बल्कि **एक्शन प्लेटफॉर्म** के रूप में विकसित किया। ISA द्वारा 'वन सन, वन वर्ल्ड, वन ग्रिड' जैसी योजनाएं पेश की गईं, जिससे सदस्य राष्ट्रों में **सौर ऊर्जा व्यापार, तकनीकी साझेदारी और वित्तीय निवेश** को बढ़ावा मिला। अफ्रीकी और द्वीपीय देशों के लिए भारत ने *सौर प्रशिक्षण, उपकरण आपूर्ति, और ग्रिड कनेक्टिविटी* के क्षेत्र में सहायक भूमिका निभाई। यह नेतृत्व महज भाषणों तक सीमित नहीं था, बल्कि जमीनी स्तर पर ऊर्जा न्याय को पहुंचाने की रणनीति थी। ISA के तहत भारत ने *World Bank*, *ADB*, और *European Investment Bank* के साथ मिलकर निवेश प्लेटफॉर्म्स तैयार किए, ताकि सौर परियोजनाओं के लिए सस्ते ऋण और अनुदान सुनिश्चित हो सकें। यही नहीं, भारत ने अपनी राष्ट्रीय संस्थाओं — *IREDA* और *NIWE* के माध्यम से विशेषज्ञता और सलाह उपलब्ध कराकर दक्षिणी देशों में संस्थागत क्षमता निर्माण की मिसाल भी पेश की।[6] भारत की यह पहल बताती है कि वह जलवायु संकट में केवल प्रतिक्रियात्मक नहीं, बल्कि रचनात्मक और संस्थागत नेतृत्व देने की दिशा में अग्रसर है। ISA सिर्फ एक अंतरराष्ट्रीय मंच नहीं, बल्कि वह उदाहरण है, जहाँ भारत ने "ग्लोबल साउथ" की आवाज़ बनकर, *प्रभाव से अधिक समाधान* को तरजीह दी।

G20 और जलवायु कूटनीति में भारत का हरित एजेंडा :

जब भारत ने 2023 में G20 की अध्यक्षता संभाली, तो यह न केवल आर्थिक नेतृत्व का अवसर था, बल्कि एक *नैतिक और नीतिगत नेतृत्व* का क्षण भी था। दुनिया कोविड महामारी, यूक्रेन युद्ध और जलवायु संकट की त्रिशंकु स्थिति से जूझ रही थी, ऐसे में भारत ने G20 मंच को एक "**जनकूटनीतिक स्पेस**" में बदलते हुए *जलवायु परिवर्तन को वैश्विक दक्षिण के दृष्टिकोण* से देखने की कोशिश की। भारत का "**Green Development Pact**" इस दिशा में एक निर्णायक पहल थी।[7] इस एजेंडा में सिर्फ शून्य-उत्सर्जन की चर्चा नहीं थी, बल्कि सतत विकास, पारिस्थितिक संरक्षण, और जलवायु न्याय को केंद्रीय स्थान दिया गया। भारत ने यह रेखांकित किया कि विकासशील देशों के लिए जलवायु नीति का अर्थ सिर्फ लक्ष्यों का निर्धारण नहीं, बल्कि वित्त, तकनीक और स्थानिक समानता की गारंटी भी होना चाहिए। G20 शिखर सम्मेलन में भारत ने जलवायु वित्त के पुराने वादों की याद दिलाई — विशेषतः विकसित देशों द्वारा प्रतिवर्ष $100 बिलियन की सहायता। इस पर ठोस प्रगति की मांग की गई। साथ ही, भारत ने *LiFE (Lifestyle for Environment)* अभियान को एक वैश्विक आंदोलन का रूप देते हुए जलवायु कार्रवाई को केवल सरकारों की नहीं, जनता की जिम्मेदारी बताया। भारत ने यह भी प्रस्ताव रखा कि वैश्विक दक्षिण के देशों के लिए *Green Credit Systems*, *सौर ऊर्जा बैंकिंग*, और *ट्रांस-नेशनल ग्रीन ग्रिड* जैसी परियोजनाओं को प्राथमिकता दी जाए। भारत की नीति यह रही कि जलवायु परिवर्तन पर चर्चा को *आर्थिक सहयोग, नवाचार और बहुपक्षीयता* से जोड़कर देखा जाए — और इसी से वह "ग्लोबल साउथ की आवाज़" की भूमिका में स्थापित हुआ।[8] G20 के मंच पर भारत का दृष्टिकोण बताता है कि *"हरित कूटनीति"* अब केवल पर्यावरण मंत्रालयों की विषयवस्तु नहीं, बल्कि यह वित्त, विदेश नीति और रणनीतिक सोच का अभिन्न हिस्सा बन चुकी है। भारत ने यह संदेश दिया कि यदि जलवायु संकट वैश्विक है, तो उसका समाधान भी केवल *उत्तरी राष्ट्रों की मर्जी* से नहीं, बल्कि दक्षिणी राष्ट्रों की भागीदारी से ही संभव है। भारत की G20 अध्यक्षता ने यह स्थापित किया कि जलवायु परिवर्तन पर उच्च नैतिक धरातल और व्यवहारिक कूटनीति के मेल से ही कोई टिकाऊ समाधान संभव है — और इस प्रक्रिया में भारत नेतृत्व नहीं थोप रहा, *आमंत्रित कर रहा*[9]

भारत की दक्षिण-दक्षिण कूटनीति में सीमाएँ और भविष्य की रणनीति :

भारत जब अंतरराष्ट्रीय मंचों पर "वैश्विक दक्षिण" की आवाज़ बनने का दावा करता है, तो यह दावा केवल कूटनीतिक सौजन्यता नहीं, बल्कि ऐतिहासिक अनुभव और सामूहिक आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति भी है। परंतु इस नेतृत्व के रास्ते में कुछ संरचनात्मक बाधाएँ और रणनीतिक उलझनें भी हैं, जिन्हें यदि दूर नहीं किया गया तो यह नेतृत्व *भावनात्मक समर्थन तक सीमित* रह सकता है। सबसे बड़ी चुनौती है — **जलवायु फंडिंग और तकनीकी संसाधनों में भारत की सीमाएँ**। भारत स्वयं विकासशील है, जिसकी घरेलू ऊर्जा ज़रूरतें, बुनियादी ढाँचों की आवश्यकताएँ और वित्तीय संसाधन सीमित हैं। ऐसे में वह जलवायु सहयोग की अग्रिम पंक्ति में खड़ा होने के बावजूद अनेक बार *Global North* से तकनीक, निवेश और सहायता की अपेक्षा करता है। यह स्थिति नेतृत्व और निर्भरता के द्वंद्व को जन्म देती है। दूसरी ओर, भारत को "दक्षिण-दक्षिण एकजुटता" बनाए रखते हुए पश्चिमी देशों से भी संवाद बनाए रखना पड़ता है — एक ऐसा संतुलन जो हर बार राजनीतिक या आर्थिक रूप से सरल नहीं होता। उदाहरण के लिए, अफ्रीका और लैटिन अमेरिका के देश जब वैश्विक उत्तर की वादाखिलाफी पर कठोर रुख अपनाते हैं, तब भारत अक्सर *मध्य मार्ग* चुनता है — जो उसके नेतृत्व की साख को चुनौती दे सकता है।

इन सीमाओं के बीच भी भारत के पास अवसर हैं। **BRICS, IBSA और BIMSTEC** जैसे मंचों के ज़रिए वह एक *वैकल्पिक जलवायु सहयोग व्यवस्था* की नींव रख सकता है, जहाँ साझा हितों, तकनीकी साझेदारी और क्षेत्रीय फंडिंग मॉडल के आधार पर कार्य हो। भारत की आईटी, सौर ऊर्जा और लो-कॉस्ट टेक्नोलॉजी में दक्षता उसे इन मंचों पर *नीतिगत नवाचारक (policy innovator)* बना सकती है।

भविष्य में *संवेदनशील नेतृत्व, संस्थागत विस्तार और सहयोगी संकल्पना* के साथ भारत को एक ऐसी कूटनीति विकसित करनी होगी जो न केवल विश्वसनीय लगे, बल्कि *वास्तव में कार्यशील* भी हो। दक्षिण-दक्षिण सहयोग केवल भाषणों में नहीं, *मूल्य आधारित साझेदारी* में फले-फूले, यही भारत की सबसे बड़ी रणनीतिक परीक्षा है।

संदर्भ सूची

1. राजमणि, लवण्या. *जलवायु न्याय और भारत की कूटनीति*, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2020, पृ. 78
2. दुबाश, नवरोज़ के. *भारत की पर्यावरण नीति और वैश्विक नेतृत्व*, सेंटर फॉर पॉलिसी रिसर्च प्रकाशन, 2019, पृ. 112
3. Rajamani, Lavanya, and Dubash, Navroz K. “India and Climate Change: Evolving Ideas and Increasing Leadership.” *Annual Review of Environment and Resources*, vol. 46, 2021, pp. 377
4. Müller, Benito. “Common but Differentiated Responsibilities: Origins and Operationalization.” *Oxford Climate Policy Review*, vol. 34, no. 2, 2022, pp. 215
5. Bhushan, Chandra. “ISA and India's Energy Diplomacy.” *Down to Earth*, vol. 27, no. 9, 2022, pp. 45

6. Kumar, Arunabha. “India's Solar Diplomacy and the Role of ISA.” *Energy Policy Review*, vol. 58, no. 3, 2021, pp. 122
7. Dubash, Navroz K. “India’s Climate Diplomacy at G20: Between Justice and Pragmatism.” *Environmental Politics Review*, vol. 36, no. 1, 2023, pp. 81
8. Saran, Shyam. “Green Diplomacy in G20: India’s Opportunity to Lead.” *The Diplomat*, vol. 42, no. 4, 2023, pp. 67.
9. Mathur, A., & Sharma, A. (2020). Negotiating Equity and Ambition: India in International Climate Politics. In Navroz K. Dubash (Ed.), India in a Warming World: Integrating Climate Change and Development New Delhi: Oxford University Press, pp. 145.